प्रसाद की कहानियों में इतिहास एवं संस्कृति

प्रिया सिंह

प्रसाद के साहित्य में भारतीय संस्कृति, जनचेतना, उदात्तता, मानव-मूल्यों के प्रति चिंता एवं मनोभूमि के उतार-चढ़ाव देखने को मिलते हैं। प्रसाद अपने युग के ऐसे प्रस्थान बिन्दु पर खड़े हैं, जहाँ एक ओर उनकी दृष्टि प्राचीन भारतीय गौरव के महिमामंडित स्वरूप पर केन्द्रित है तो दूसरी ओर भविष्य की चिंता से उद्वेलित भी है। वर्तमान की वेदना से उबरने का मार्ग तलाश करना इन चिंताओं के मूल में है। भारतीय नवजागरण के संदर्भ में तत्कालीन लेखकों की प्रमुख जिम्मेदारी है देश की सोयी हुई जनता को जागरूक करना अर्थात् तत्कालीन शासकों-शोषकों के राजनीतिक, सामाजिक, धार्मिक कुचक्रों से उसे मुक्त करना ताकि वे अपने विकास के मार्ग को खोजने हेतु अग्रसर हो सकें। भारतीय जनता को गुलाम मानसिकता से आजादी दिलाने के लिए भारतीय इतिहास, गौरवशाली परम्परा और समृद्ध संस्कृति आवश्यक होने के साथ ही अंग्रेजों के लिए मुँहतोड़ जवाब भी है। इसे भारतीय जनमानस तक पहुँचाने के लिए प्रसाद साहित्य को माध्यम बनाते हैं। प्रसाद के लिए ऐतिहासिक पृष्ठभूमि तत्कालीन आवश्यकता तथा वर्तमान का उत्तर तलाशने की व्याकुलता है, किन्तु अतीत या अतीत के चित्र और चरित्र प्रसाद को उतने ही स्वीकार्य हैं, जितने वे वर्तमान के निर्माण में सहायक हैं। अवरोधक बनने वाली प्राचीन व्यवस्था या प्रतिहिंसा जगाने वाली किसी विचार-संस्कृति के प्रति वे मोह नहीं रखते।

प्रसाद इस तथ्य से भलीभाँति अवगत हैं कि इतिहासकारों ने प्राचीन भारतीय गौरव एवं उदात्तता पर पर्दा डालने के उद्देश्य से भारतीय ऐतिहासिक तथ्यों को तोड़-मरोड़ कर प्रस्तुत किया है। अंग्रेज विद्वान्, इतिहासकार अथवा साम्राज्यवादी इतिहास लेखक अंग्रेजी सत्ता को अक्षुण्ण बनाए रखने के लिए भारतीय इतिहास तथ्यों, परम्पराओं और संस्कृति को विकृत करके तथा भारतीय ज्ञान-विज्ञान एवं संस्कृति को अंग्रेजों की अपेक्षा निम्नकोटि का साबित करके प्रस्तुत करते रहे हैं, ताकि भारतवासियों का कोई जातीय व्यक्तित्व निर्मित न हो सके। यह सब जानते हुए प्रसाद ने भारतीय वाङ्मय में से ऐसे ऐतिहासिक तथ्यों की खोज की जिनसे प्राचीन भारत के जीवन, संस्कृति, समाज और राजनीति पर प्रकाश पड़ सके, साथ ही जातीय गौरव एवं राष्ट्रीय चेतना के प्रति लोगों का ध्यान भी आकर्षित हो। 'विशाख' नाटक की भूमिका में उन्होंने लिखा है- "मेरी इच्छा भारतीय इतिहास के अप्रकाशित अंश में से उन प्रकाण्ड घटनाओं का दिग्दर्शन कराने की है, जिन्होंने हमारी वर्तमान स्थितियों को बनाने का बहुत प्रयत्न किया है।" प्रसाद के लिए अतीत भावमुग्ध होने के लिए नहीं, बल्कि वर्तमान जड़ता को तोड़ने के लिए है, भविष्य की आशा निराधार कल्पना नहीं, वरन् कटु एवं असह वर्तमान की दिशा बदलने के लिए उठा कदम है। प्रसाद ने इतिहास का पुनर्लेखन नहीं किया, बल्कि उसमें से ऐसे युगों और चरित्रों को उठाया है, जो वर्तमान को भी दृष्टि एवं दिशा देते हैं। इसलिए प्रसाद की ऐतिहासिक रचनाओं की प्रासंगिकता आज भी बनी हुई है। 'स्कन्दगुप्त' के मंचन अनुभव के संदर्भ में शांत गांधी ने लिखा है कि- "आज हमें भी ऐसे स्कन्दगुप्त की तलाश है जो प्रकट होकर महान स्वार्थ त्याग के द्वारा इस देश की रक्षा कर सके और उसे सुदृढ़ बना सके।"[1] सामाजिक जीवन के लिए व्यक्तिगत सुख साधनों का उत्सर्ग, उदान्त आदर्श की स्थापना के लिए संघर्ष, रूढ़ियों, आडम्बरों के प्रति साहसपूर्ण प्रतिरोध इनकी सभी कृतियों में समाहित है।

प्रसाद की ऐतिहासिक चेतना मुख्यतः परम्परा और संस्कृति के सहमेल से बनी है। संस्कृति मनुष्य को आंतरिक रूप से शक्तिशाली बनाती है। मनुष्य का शील, गुण, करुणा, दया, धर्म आदि ही संस्कृति है, जो मनुष्य के इतिहास के निर्माण में सहायता प्रदान करती है। परम्परा संस्कृति को लेकर सदियों से यात्रा करती हुई आज तक प्रवाहमान है। इतिहास इन दोनों के संयोग का ही परिणाम है। इतिहास द्वारा भी राष्ट्रीय चेतना विकसित की जा सकती है, किन्तु प्रसाद नहीं चाहते कि राष्ट्रीय भावना का विकास अपने समय की राजनीतिक दासता की प्रतिक्रिया के रूप में हो, वे राष्ट्रीय भावना को अपनी प्रकृति, वैभव एवं सांस्कृतिक इतिहास की गौरव गाथा का पुष्ट आधार देना चाहते हैं, इसीलिए उनके साहित्य का विषय ऐतिहासिक घटनाएँ तो रहीं, किन्तु परम्परा एवं सांस्कृतिक मूल्य उन घटनाओं को काफी हद तक प्रभावित करते रहे जैसे- 'पुरस्कार' कहानी में मधुलिका अपने व्यक्तिगत प्रेम एवं राष्ट्र में से राष्ट्र को चुनती है और व्यक्तिगत प्रेम को तिलांजलि देकर अपने राष्ट्र को विदेशी के हाथों जाने से रोकती है। 'आकाशद्वीप' कहानी की नायिका चम्पा हर भोग-वस्तुओं एवं सुख-सुविधा को त्यागकर समाज की सेवा का वरण करती है। इसी प्रकार 'ममता' कहानी में भी ममता शेरशाह के अपार स्वर्ण और ऐश्वर्य को तिरस्कारपूर्वक अस्वीकार कर देती है तथा हुमायूँ को एक रात शरण देने के उपहार में जब अकबर ममता के लिए भवन बनवाना चाहता है, तब ममता इस सुविधा को अस्वीकार कर खंडहरों में चली जाती है। प्रसाद इतिहास को सांस्कृतिक दृष्टि से देखते हैं, जहाँ धर्म, समाज, मनुष्य, संस्कृति से च्युत हो जाते हैं, वहाँ प्रसाद तीखे स्वर में विरोध भी करते हैं। प्रसाद के कथा साहित्य से गुजरते हुए ही इनके इतिहास, संस्कृति एवं परम्परा को ठीक से समझा जा सकता है तथा इनके परस्पर सम्बन्धों का भी पता लगाया जा सकता है।

दासी, पुरस्कार, नूरी, गुंडा, देवरथ, सालवती, ममता, आकाशद्वीप, व्रतभंग आदि सच्चे अर्थों में प्रसाद की ऐतिहासिक कहानियाँ हैं। इतिहास के विकासक्रम की दृष्टि से प्रागैतिहासिक काल से लेकर ब्रिटिश युग तक की व्यापक पृष्ठभूमि पर इन कहानियों की रचना हुई है। 'चित्रमंदिर' प्रागैतिहासिक काल की, 'पुरस्कार', 'सालवती', 'व्रतमंत्र' और आकाशद्वीप बौद्धकाल की, 'सिकन्दर की शपथ', 'खण्डहर की लिपि', 'अशोक', 'चक्रवर्ती का स्तम्भ', मौर्यकाल की, 'दासी', 'स्वर्ग के खण्डहर', 'देवरथ' मुसलमानों के आक्रमणकाल की, 'ममता', 'तानसेन', 'नूरी', 'गुलाम' और 'चित्तौर' उद्धार' मुगलकाल की, 'गुंडा', 'शरणागत' ब्रिटिश राज्यकाल की कहानियाँ हैं। इन कहानियों में ऐतिहासिक चेतना के साथ-साथ सांस्कृतिक और पारम्परिक चेतना मिलती है। प्रसाद की कहानी 'शरणागत' 1857 की क्रांति-कथा का अंग है। सैनिक विद्रोह की ओर इस में संकेत किया गया है तथा कथा के पात्र काल्पनिक हैं। भारतीय परम्परा और संस्कृति में शरणवत्सलता लोकप्रिय प्रवृत्ति रही है, जिसमें शत्रु भी सम्मान का पात्र होता है। 'शरणागत' में एलिस और विलकर्ड ऐसे पात्र हैं, जो जमींदार किशोर सिंह के यहाँ शरण लेते हैं। पूरी कहानी भारतीय परम्परा और संस्कृति का दस्तावेज है, जहाँ पति के खाने के पश्चात् ही पत्नी खाती है।

> ''एलिस ने सुकुमारी से कहा- आप क्या यहाँ नहीं बैठेंगी? क्या यहाँ भी कुर्सी है?
>
> सुकुमारी- परसेगा कौन?
>
> एलिस- खानसामा
>
> सुकुमारी- क्यों! क्या मैं नहीं हूँ।
>
> किशोर सिंह- जिद न कीजिए, यह हमारे भोजन कर लेने पर ही भोजन करती हैं।"[2]

भारतीय परिवार में खानसामा परोसकर खिलाए, विचित्र लगता है, यहाँ कुटुम्ब जब अपने हाथ से एक-दूसरे को परोसकर खिलाते हैं, तो अपनेपन का बोध होता है। इतना ही नहीं जब एलिस विदा लेती है, तो वह भारतीय परिधान पहनती है। "एलिस ने अपना गाउन नहीं पहना, उसके बदले फिरोजी रंग के रेशमी कपड़े का कामदानी लहंगा और मखमल की कंचुकी जिसके सितारे रेशमी ओढ़नी के ऊपर से चमक रहे हैं.....। आँखों में काजल की रेखा भी, चोटी भी फूलों से गुंथी जा चुकी है और मस्तक में सुन्दर-सा बाल अरुण का बिन्दु भी तो है।" शरणागत की इन पंक्तियों से स्पष्ट हो जाता है कि प्रसाद भारतीय संस्कृति से किस तरह जुड़े हैं।

प्रसाद 'जहाँनारा' कहानी में एक शहजादी के त्याग व आदर्शनिष्ठा भावना से इतिहास विख्यात औरंगजेब जो क्रूर और पत्थर दिल है, जिसे द्रवीभूत करना सहज कार्य नहीं, किन्तु जहाँनारा के आदर्श चरित्र के कारण वह द्रवीभूत हो जाता है (जहाँनारा औरंगजेब की बहन है।) एक पुराने पलंग, जीर्ण बिछौने पर जहाँनारा पड़ी थी। औरंगजेब ने देखा कि वह जहाँनारा जिसके लिए भारतवर्ष की कोई वस्तु अलभ्य नहीं थी, जिसके बीमार पड़ने पर शाहजहाँ भी व्यग्र हो जाता था और सैकड़ों हकीम उसे अरोग्य करने के लिए प्रस्तुत रहते थे, वह इस तरह एक कोने में पड़ी है। पाषाण भी पिघला, औरंगजेब की आँखें आँसुओं से भर आयीं और वह घुटनों के बल बैठ गया।"[3] जहाँनारा त्याग की मूर्ति है, निर्वासित पिता के साथ रहती है, लेकिन भाई औरंगजेब के पास नहीं जाती। यहाँ भी प्रसाद ने भारतीय संस्कृति का निर्वाह किया है। संस्कृति व्यक्ति के अंदर आत्मसम्बल प्रदान करती है, जहाँनारा का त्याग और बलिदान इतिहास का बीज नहीं है, बल्कि हमारी परम्परा और संस्कृति के स्तम्भ हैं। इसी प्रकार प्रसाद की कहानी 'गुंडा' ऐतिहासिक होते हुए भी मनुष्य की कोमल भावना को प्रस्तुत करती है। 18वीं शताब्दी के अंतिम भाग में वह काशी नहीं रह गयी थी, जिसमें अजातशत्रु की परिषद् में ब्रह्म-विद्या सीखने के लिए विद्वान् ब्रह्मचारी आते थे। इसी निराश स्थिति में काशी ने

एक नए सम्प्रदाय की सृष्टि की थी, जिससे कहानी का प्रधान चरित्र 'गुंडा' आता था। प्रसाद की कहानी 'गुंडा' संस्कृतिनिष्ठ है, जिसकी व्याख्या में प्रसाद जी कहते हैं- "वीरता जिसका धर्म था, अपनी बात पर मिटना, सिंह वृत्ति से जीविका ग्रहण करना, प्राण-भिक्षा मांगने वाले कायरों तथा चोट खाकर गिरे हुए प्रतिद्वन्द्वी पर शस्त्र न उठाना, सताए हुए निर्बलों को सहायता देना और प्रत्येक क्षण प्राणों को हथेली पर लिए घूमना उसका कार्य था, उन्हें लोग काशी में 'गुंडा' कहते थे।"[4] नन्हकू सिंह (गुंडा) दुलारी की सूचना पर प्राणों पर खेलकर राजा चेतसिंह और राजमाता को मुक्ति दिलाता है। 'पन्ना' ने नन्हकू को देखा, एक क्षण के लिए चारों आँखें मिलीं जिनमें जनम-जनम का विश्वास ज्योति की तरह जल रहा था। यह संकेत है कि गुंडा कहे जाने वाले नन्हकू सिंह में पन्ना के लिए गहरा उदात्त राग-भाग पहले से मौजूद है। परमानन्द श्रीवास्तव 'स्वाधीन चेतना और स्वच्छन्दतावाद' की कहानियाँ लेख में लिखते हैं- "पन्ना के लिए वह कुछ भी करने को तैयार था। वह मर सकता था। वीरता और साहस प्रेम को पूर्णता देने वाली चीजें हैं। यह निर्लज्ज कराहने वाला प्रेम नहीं है। यह अपने को मिटाकर प्रिय के गौरव को अक्षुण्ण रखने वाला प्रेम है।"[5]

प्रसाद की कहानी 'गुलाम' ऐतिहासिक कथा है। गुलाम प्रथा को उठाते हुए प्रसाद जी ने भारतीय जनमानस के हृदय में स्वतंत्रता का स्फूर्त संदेश देने का प्रयास किया है। 'गुलाम' में भारतीय संस्कृति की छटपटाहट भी है। प्रसाद इतिहास के निर्माण में इच्छा शक्ति को महत्त्व देते हैं। इच्छा शक्ति के पूर्णतः विनष्ट होने पर ही व्यक्ति, समाज और राष्ट्र गुलाम होते हैं। गुलाम अपनी दुर्दशा से घायल और आक्रांत है, अंततः उसके अंदर की इच्छा शक्ति उसकी गुलामी को समाप्त करती है और "गुलाम कादिर ने शाह आलम की दोनों आँखें निकाल लीं। रोशनी की जगह उन गढ्ढों से रक्त की फुहारें निकलने लगीं, निकली आँखों को कादिर की आँखें प्रसन्नता से देखने लगीं।"[6] प्रसाद परम्परा और संस्कृति को विनष्ट करने वाले व्यक्ति को अक्षम्य मानते हैं। मदिरा और काम-वासना तथा समलैंगिकता के आनन्द में डूबा शाहआलम भारतीय संस्कृति व सभ्यता के साथ बलात्कार करता है और कादिर उसकी समलैंगिकता का शिकार होता है। प्रसाद कादिर को ही शाहआलम की मृत्यु का हथियार बनाते हैं। कादिर की इच्छा शक्ति प्रसाद की इच्छा शक्ति है, जो गौरवशाली इतिहास के निर्माण में सहायक है। "इतिहास में घटनाओं की प्रायः पुनरावृत्ति देखी जाती है। इसका तात्पर्य यह नहीं कि कोई नई घटना होती ही नहीं, किन्तु साधारण नई घटना भी भविष्य में फिर होने की आशा रखती है। मानव समाज की कल्पना का भण्डार अक्षय है, क्योंकि वह इच्छा शक्ति का विकास है। इन कल्पनाओं का, इच्छाओं का मूल-सूत्र बहुत ही सूक्ष्म और अपरिपुष्ट होता है। जब वह इच्छा शक्ति किसी व्यक्ति या जाति में केन्द्रीभूत होकर अपना सफल या विकसित रूप धारण करती है, तभी इतिहास की सृष्टि होती है। विश्व में जब तक....इतिहास का नवीन अध्याय खुलने लगता है। मानव समाज के इतिहास का इसी प्रकार संकलन होता है।"[7] सुन्दर एवं कल्याणकारी इच्छा शक्ति संस्कृति एवं परम्परा से सम्बन्ध स्थापित करके ही उत्पन्न हो सकती है। प्रसाद की एक अन्य कहानी 'अशोक' में अशोक मौर्यकालीन सम्राट है। वह अपने जीवन में अनेक शादियाँ करता है। उसकी पाँचवीं पत्नी तिष्यरक्षिता है, जो अशोक के युवा सुन्दर पुत्र कुणाल पर मुग्ध है, लेकिन कुणाल उसे जननी की पावन-मूर्ति ही मानता है। अपने प्रेम में असफल होकर तिष्यरक्षिता ईर्ष्या व क्रोध में आकर कुमार से प्रतिशोध लेती है। उसके षड़यंत्र का शिकार कुणाल साम्राज्य से निकल जाता है। अशोक को जब इस षड़यंत्र का पता चलता है, तो वह तिष्यरक्षिता को कठोर दण्ड देता है। प्रसाद भारतीय इतिहास को कलंकित होने से बचाते हैं। पाश्चात्य कथा-साहित्य में माँ-पुत्र के बीच अनैतिक सम्बन्धों का खूब जिक्र मिलता है, पर भारतीय परम्परा और संस्कृति में ऐसा सम्बन्ध स्वीकार्य नहीं है, इसलिए प्रसाद उसे व्यक्तिगत घटना न मानकर पूरे राष्ट्र की घटना व समस्या मानते हैं। यही कारण है कि राजसभा में पत्नी तिष्यरक्षिता को दंडित करते हुए कहते हैं- ''यह तुम्हारी लेखनी से लिखा गया है? क्या उस दिन तुमने इसी कुकर्म के लिए मुद्रा छिपा ली थी? क्या कुणाल के बड़े-बड़े नेत्रों ने ही तुम्हें अपने निकलवाने की आज्ञा देने के लिए विवश किया था? अवश्य तुम्हारा ही कुकर्म है। तुम्हारी जैसी स्त्री को पृथ्वी के ऊपर नहीं, किन्तु भीतर रहना चाहिए।"[8]

सांस्कृतिक मूल्यों की संक्रांति का परिचय हमें 'ध्रुवस्वामिनी' नाटक में भी मिलता है। अपने क्लीव एवं स्खलित पति रामगुप्त के प्रति धुवस्वामिनी का विरोध इतिहास सम्मत नहीं भी हो सकता, क्योंकि इतिहास के अनुसार रामगुप्त की मृत्यु के बाद ध्रुवस्वामिनी चन्द्रगुप्त से पुनर्विवाह करती है। परन्तु प्रसाद चन्द्रगुप्त के विरुद्ध क्रांति करवाकर उसे राज्याधिकार से वंचित कराते हैं। यहाँ प्रसाद की दृष्टि इतिहास से अधिक उन सांस्कृतिक मूल्यों पर है, जिनके द्वारा वे नारी को जीवन का पूरा अधिकार दिलवाना चाहते हैं। दूसरी ओर, एक कायर एवं विलासी शासक देश व जाति का कितना अहित कर सकता है, यह दिखाना भी उनका अभीष्ट है। चन्द्रगुप्त की वीरता एवं चाणक्य की कूटनीति ने भारत को पराधीनता से मुक्ति दिलायी थी। प्रसाद चाणक्य और बुद्ध में गांधी को देख रहे थे और उन्हें अपनी आजादी बहुत दूर नहीं दिखाई दे रही थी। यह आजादी न केवल राजनीतिक थी, वरन् सांस्कृतिक व सामाजिक भी थी। प्रसाद की दृष्टि में व्यक्ति से अधिक महत्त्वपूर्ण सांस्कृतिक मूल्य हैं, जो किसी युग विशेष को उल्लेखनीय बनाते हैं। इसी कारण वे अजातशत्रु एवं चन्द्रगुप्त से अधिक महत्त्व गौतम बुद्ध व चाणक्य को देते हैं।

प्रसाद की अधिकांश रचनाएँ ऐतिहासिक पृष्ठभूमि पर रची गयी हैं। इनकी कहानियाँ ऐतिहासिक पृष्ठभूमि के बावजूद मानवीय भावभूमि से जुड़ी सामाजिक परिवेश की यथार्थता को बयाँ करती

हैं। प्रसाद एक युगचेता रचनाकार थे, अतः उनकी कहानियाँ तत्कालीन युग चेतना से सम्पन्न ही नहीं हैं, बल्कि आज भी उतनी ही ताजा और समकालीन हैं। आज का दौर जो पूंजी के विकेन्द्रीकरण एवं सूचना प्रसार का युग है, वह मूल्यों के विघटन की पीड़ा से भी जूझ रहा है। हम अंग्रेजों की गुलामी से तो मुक्त हो गए हैं, लेकिन भूमण्डलीकरण की नीतियों के कारण भारत आज भी पश्चिमी देशों का उपनिवेश बना हुआ है। वर्तमान समय में जहाँ इस गुलामी से मुक्ति का रास्ता नहीं दिखता और न मूल्य ही दृष्टिगत होते हैं, ऐसे समय में प्रसाद की कहानियाँ जो त्याग व बलिदान की भावना से ओत-प्रोत हैं अंधकार में ज्योति का काम करती हैं। उनकी अधिकांश कहानियों में देश-प्रेम की भावना समाहित है। वर्तमान में भोगवाद ने हमें इस तरह अपनी चपेट में ले रखा है कि हम वस्तुओं में ही सुख तलाशते रहते हैं। ऐसे में प्रसाद की कहानी 'आकाशद्वीप' तथा उसकी पात्र चम्पा हर भोग की वस्तुओं को त्याग तथा सुख-सुविधा का निषेध करने की सीख देती है। 'आकाशद्वीप' कहानी में चम्पा बुद्धगुप्त से विवाह को ही नहीं, राजरानी के पद को भी अस्वीकार कर जीवनभर उस द्वीप के निर्धन आदिवासियों की सेवा का वरण करती है। वह कहती है- ''बुद्धगुप्त मेरे लिए सब भूमि मिट्टी है, सब जल तरल है, सब पवन शीतल है। कोई विशेष आकांक्षा हृदय में अग्नि के समान प्रज्ज्वलित नहीं है। मुझे छोड़ दो इन निरीह भोले-भाले प्राणियों के दुःख की सहानुभूति व सेवा के लिए।" इसी प्रकार 'पुरस्कार' कहानी में भी मधुलिका अपनी जमीन की कीमत के रूप में महाराज द्वारा दी गयी स्वर्ण मुद्राओं को अस्वीकार कर देती है। प्रसाद आर्थिक स्वतंत्रता को ही वास्तविक स्वतंत्रता मानते हैं, किन्तु आज हमें आर्थिक रूप से ही परतंत्र बनाया जा रहा है। 'सालवती' कहानी में प्रसाद सालवती के पिता के इस कथन द्वारा सचेत करते हैं- ''आर्थिक पराधीनता ही संसार में दुःख का कारण है। मनुष्य को उससे मुक्ति पाना चाहिए।" आज हम वैभव के द्वारा पृथ्वी पर ही स्वर्ग बनाना चाहते हैं। हम प्रतिदिन इस तकनीक के गुलाम होते जा रहे हैं। प्रसाद अपनी कहानी 'स्वर्ग के खण्डहर' में अतिशय भोगवाद के संदर्भ में उसके अन्त का अवसादपूर्ण संकेत देते हैं। कहानी का स्वर्ग आमोद-प्रमोद, विलास तथा अभिसार का केन्द्र है, जहाँ संसार के सभी सुखों को इकट्ठा करने का प्रयास किया जाता है, परन्तु ऐसा तो नहीं होता, वरन् स्वर्ग कारागार में तब्दील हो जाता है। प्रसाद इस मानव निर्मित स्वर्ग का विरोध करते हुए लिखते हैं- ''पृथ्वी को केवल वसुंधरा होकर मानव जाति के लिए जीने दो, अपनी आकांक्षा के कल्पित स्वर्ग के लिए, क्षुद्र स्वार्थ के लिए इस महती को, इस धरती को नरक न बनाओ, जिससे देवता बनने के प्रलोभन में पड़कर मनुष्य राक्षस न बन जाए, शेख।" वर्तमान में अवमूल्यन होते सम्बन्धों के दौर में उनकी कहानी 'मधुआ' और 'छोटा जादूगर' आज की चुनौतियों से टकराने का साहस देती है।

प्रसाद ने इतिहास को इतिहास दृष्टि में, प्राचीन दर्शनों को जीवन्त तत्त्व बोध में बदलने का जो दुस्कर काम किया है, वह साधारण प्रतिभा द्वारा सम्भव नहीं है। प्रसाद के सम्पूर्ण कथा-साहित्य में उनकी इतिहास दृष्टि, सांस्कृतिक चेतना और परम्परा को देखा जा सकता है। प्रसार जिस अतीत का चित्रण करते हैं, वह विकास की दिशा के निर्धारण के लिए भारतीय को आत्मबल प्रदान करता है तथा उनका दिशा निर्देश करता है। वे अपने समय के समाज को गौरवशाली इतिहास, उदात्त पात्रों, सांस्कृतिक वं पारम्परिक मूल्यों द्वारा सँवारना चाहते हैं, इस प्रक्रिया में इतिहास प्रसाद के लिए तथ्यों का ढेर नहीं रह जाता, वरन् प्रेरणा का कार्य करता है। साथ ही प्रसाद का कथा-साहित्य अपने युग के प्रति जितना प्रतिबद्ध है, शाश्वत जीवन-मूल्यों के प्रति भी उतना ही चिंताकुल है।

सदर्भ :

1. जयशंकर प्रसाद की प्रासंगिकता : प्रभाकर श्रोत्रीय, पृ0 26.

2,3,4. जयशंकर प्रसाद : प्रसाद की सम्पूर्ण कहानियाँ, पृ0 30,56,315.

5. समकालीन सृजन ' सम्पादक-शम्भूनाथ, पृ0 52.

6,8. जयशंकर प्रसाद : प्रसाद की सम्पूर्ण कहानियाँ, पृ0 52,46
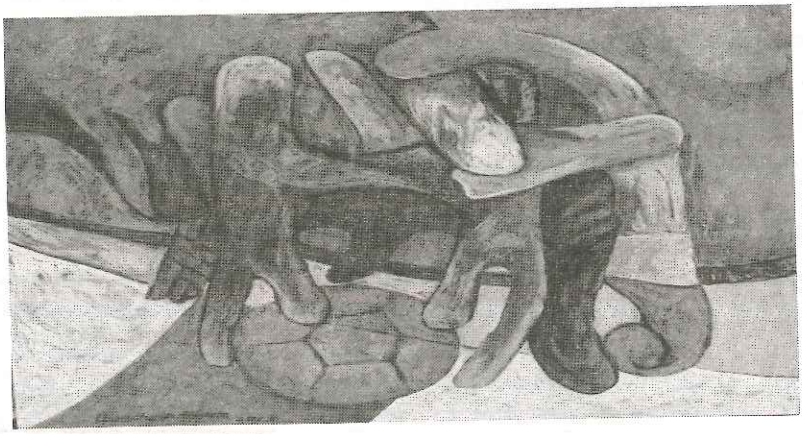
7. पूर्वग्रह : सम्पादक-अशोक बाजपेयी, पृ0 18-19, प्रसाद की इतिहास दृष्टि, केसरी कुमार लेख से उद्धृत। ☒